

अहिंसा से विश्व शांति की ओर

डॉ. एम डी. थॉमस

भूमिका

भाषा के भीतर 'हिंसा' शब्द पहले बना और 'अहिंसा' शब्द बाद में। 'हिंसा' सकारात्मक शब्द है और 'अहिंसा' नकारात्मक। क्या इसका मतलब कहीं यह तो नहीं कि 'हिंसा' इन्सान की सहज वृत्ति है और 'अहिंसा' की भावना उसे बाद में हासिल हुई। लेकिन यह अपने आप में एक अलग चर्चा का विषय है। इतना तो निश्चित है कि अहिंसा ही इन्सानी संस्कृति की पहचान हो सकती है। इन्सान की जिंदगी एक ऐसी प्रक्रिया है जो हिंसा से अहिंसा की ओर चलती है। आखिर विश्व-शांति-जैसी आध्यात्मिक बुलंदियाँ अहिंसा की राह से चलनेवाले को ही नसीब होती हैं।

हिंसा

हिंसा में किसी व्यक्ति या समुदाय को लेकर मनमुटाव है, उसे मारने का भाव है, उसे नुकसान पहुँचाने का भाव है और उसे खत्म करने का भाव है। हिंसावादी स्वभाव से खुदगर्ज है। उसकी दुनिया में दूसरे के लिये कोई जगह नहीं है। वह औरों को अपने लिये खतरा समझता है। सच कहा जाय, यही उसके नजरिये का खोट है। हिंसा का जवाब हिंसा है और यह सिलसिला तब तक चलता रहता है जब तक सब कुछ बर्बाद न होता। हिंसा से किसी भी समस्या का हल होना तो दूर, मुसीबतें बेहद बढ़ जाती हैं, दूसरों के लिये ही नहीं, अपने लिये भी। आत्म-रक्षा, दूसरे की भलाई, समाज की बेहतरी, आदि मकसद को लेकर हिंसा कुछ हद तक बर्दाश्त की जा सकती है। फिर भी, इन्सानियत को अपनी गरिमामय असलियत की अमलीजामा पहनाना हो, अहिंसा के पुनीत भाव के साथ कदापि समझौता नहीं किया जा सकता।

अहिंसा

अहिंसा में संयम है, हिंसा से परहेज करने का भाव है, औरों के प्रति सम्मान है, उन्हें तकलीफ नहीं देने का भाव है और उनके सुख-शांति का ख्याल है। वह अमन व चैन से भरे-पूरे समाज के निर्माण लिये एक बड़ी प्रतिबद्धता है। वह भलाई से बुराई को जीतने की कला है। अहिंसा मानव जीवन की सकारात्मक सोच है। वह स्वस्थ और स्वच्छ मन की उपज है। अहिंसा के संतुलित माहौल में सब लोग अपने आपको सुरक्षित महसूस करते हैं। वह सामाजिक बदलाव को हासिल करने का सबसे कारगर जरिया है। अहिंसा की भावना में ही इन्सानी जिंदगी के लायक नैतिक व्यवहार कायम होता है। अहिंसा में ही इन्सान की आध्यात्मिक ऊँचाई मापी जा सकती है। इन्सान इन्सान के रूप में कितना उदात्त है, इन्सान असल में कितना इन्सान है, इस बात का भी पता अहिंसा की भावना से ही मिलता है।

अहिंसा से शांति

शांति अहिंसा से ही हासिल हो सकती है। हर प्रकार की हिंसा की भावना से रहित होना शांति के लिये अहम् है। अहिंसा के अनुकूल मौसम में जीवन-रूपी धरती से शांति स्वयं फूट निकलती है। अक्सर लोग यह सोचा करते हैं कि शांति अपने भीतर होनेवाला एक सुखद भाव है, जिसे मौन-साधना से प्राप्त किया जाता है। लेकिन, यह शांति का सिर्फ व्यक्तिगत पहलू है। शांति का

एक सामाजिक पहलू भी है। वह है व्यक्ति और व्यक्ति तथा समुदाय और समुदाय के दरमियान होनेवाला सुखमय भाव। यह भाव अपने आप नहीं बनता है। बीच में रिश्ते के पुल को बाँधना होगा। आपसी तालमेल और सहकारी रवैया का सेतु-बंधन इस भाव की कीमत है। शांति के व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों पहलू जरूरी हैं और वे एक दूसरे के लिये पूरक भी हैं। भीतरी शांति बेहद महत्वपूर्ण इस लिये है कि उसके बगैर बाहरी शांति की कल्पना तक मुनासिब नहीं है। इसके बावजूद, बाहरी शांति ही भीतरी शांति का प्रमाण है और उसके नहीं रहने से भीतरी शांति निष्फल और बेकार साबित होती है। जब भीतरी शांति प्यार-मुहब्बत-भरा बाहरी व्यवहार बनकर सामाजिक जीवन में प्रतिफलित होती है तब शांति की कल्पना सार्थक होती है। लेकिन, अहिंसा ही भीतरी-बाहरी शांति का उद्गम-स्थल है।

अहिंसात्मक व्यवहार से विश्व-शांति

विश्व-शांति की परिकल्पना असल में अहिंसात्मक व्यवहार से ताल्लुकात रखती है। जब अहिंसा की भावना व्यक्ति के स्तर से ऊपर उठकर समाज के स्तर की ओर बढ़ती है, विश्व-शांति का सफर शुरू होता है। जब परिवार, समुदाय, देश और समाज में अहिंसा की भावना है, जब परिवार और परिवार के बीच, समुदाय और समुदाय के बीच, देश और देश के बीच प्यार-मुहब्बत, तालमेल और सहयोग का व्यवहार है, तभी विश्व-शांति का सफर अपनी मंजिल तक पहुँचता है। अहिंसा का भाव वह बुनियाद है जिस पर विश्व-शांति की इमारत बनकर खड़ी होती है। अहिंसा की सुनियोजित पटरी से ही विश्व-शांति की ओर मानव समाज का सफर तय हो सकता है। देश में और दुनिया में जहाँ-जहाँ छोटे और बड़े पैमाने पर हिंसा हुई थी, वहाँ-वहाँ शांति और विश्व-शांति का सपना बुरी तरह से टूट गया था, यह बात समाज के सुचारू चलन के लिये अहिंसा कितना अनिवार्य है इस बात का जबर्दस्त सबूत है। अहिंसा की मानसिकता को अपनाया जाय, अहिंसात्मक व्यवहार किया जाये और विश्व-शांति को बढ़ाया जाये, इन्सान के लिये यही दरकार है।

अहिंसा और विश्व-शांति के लिये बाइबिल की सर्वसमावेशी मान्यता

अहिंसा और विश्व-शांति के भाव को मजबूत करने के लिये बाइबिल की बुनियादी और सर्वसमावेशी मान्यता बहुत ही खास महत्व का है। इन्सान ईश्वर का प्रतिरूप बनाया गया है। ईश्वर की छाया उसमें मौजूद है। ईश्वर उसमें वास करता है और वह ईश्वर का जीवंत मंदिर है। साथ ही, ईश्वर पिता है और इन्सान ईश्वर के लिये औलाद है तथा एक दूसरे के लिये भाई या बहन समान है। इस लिये, वह ईश्वर के बराबर इज्जत के लायक है और जो इन्सान के लिये किया जाता है, वही ईश्वर के लिये किया जाता है। इन्सान के साथ हिंसा करना ईश्वर के साथ हिंसा करने के बराबर है। इन्सान की बेइज्जती ईश्वर की बेइज्जती से कतई कम नहीं है। इतना ही नहीं, जो समाज में शांति फैलाने का काम करते हैं, वे ईश्वर के पुत्र कहलायेंगे। अहिंसा का पालन करने से ही नहीं, विश्व में सक्रिय रूप से शांति कायम करने का प्रयास करते रहने से इन्सान ईश्वर की विरासत में सहभागी हो जाता है। एक दूसरे की प्यार-भरी सेवा ही अहिंसा की भावना का व्यावहारिक रूप है। यह बात तरजीही तौर पर उन लोगों पर लागू होती है जो गरीब, अनपढ़, आवाजहीन, ताकतहीन और बेसहारे होकर समाज के हाशिये पर जीने के लिये मजबूर किये गये हैं। ऐसी जीवन-शैली ही विश्व-शांति हासिल करने की एक अकेली राह है।

अहिंसा और विश्व-शांति के लिये धर्म-परंपराओं के सार्वभौम मूल्य

अहिंसा और विश्व-शांति की राह में विविध धर्म-परंपराओं में मौजूद सार्वभौम आध्यात्मिक और मानवीय मूल्य इन्सान के सामाजिक जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिये संकेत-चिन्ह के समान हैं। जैन परंपरा के 'अहिंसा, जीओ और जीने दो, अपरिग्रह और अनेकांतवाद', बौद्ध परंपरा के 'मध्यम मार्ग, ज्ञानोदय और करुणा', हिंदू परंपराओं के 'सर्वे भवन्तु सुखिनः, वसुधैवकुटुंबकम् और

निष्काम कर्म', सिक्ख परंपरा के 'लंगर और ग्रंथ-गुरु', इस्लाम के 'शांति और पूर्ण समर्पण', ईसाइयत के 'प्रेम, सेवा, क्षमा, पिता ईश्वर और इन्सान-मंदिर', पारसी परंपरा के 'अच्छे विचार, अच्छी बातें और अच्छे कार्य, ईश्वर-आग', यहूदी परंपरा के 'नियम-केंद्रित जीवन', ताओ परंपरा के '-जीवन-मार्ग', शिंटो के 'प्रकृति-केंद्रित जीवन', कन्फूशियस के 'नैतिक व्यवहार', आदि इन्सान की संस्कृति की एक से बढ़कर एक अनोखी मोतियाँ हैं। इन्हें महज किसी एक समुदाय की विरासत समझना अक्षम्य भूल होगी। ये सभी मूल्य मानव मात्र के स्वस्थ और कल्याण के लिये बने संतुलित आहार के अनूठे व्यंजन हैं। ये एक ही ईश्वर की देन हैं और मानव समाज वी सार्वमलित धरोहर हैं। ये मूल्य पूरी तरह से अहिंसात्मक तो हैं ही, ये विश्व-शांति के लायक खुराक भी हैं।

अहिंसा और विश्व-शांति के लिये धर्म-परंपराओं में एक दिव्य सत्ता की पहचान

अहिंसा और विश्व-शांति कायम रखने के लिये विविध धर्म-परंपराओं को उस दिव्य सत्ता की पहचान होनी चाहिये, जो सब के लिये एक है। सभी धार्मिक धाराएँ एक ही अलौकिक सोते से उत्पन्न हुई हैं। विविध महापुरुषों ने परम तत्व से प्रेरित होकर अलग-अलग समय और स्थान विशेष में समाज का दिशानिर्देश किया है। उन्होंने इन्सान की जिंदगी को सुचारू रूप से चलाने के लिये अपने-अपने रूहानी एहसास से आध्यात्मिक और मानवीय मूल्यों को समूचे समाज के लिये उपलब्ध किया था। लेकिन, क्या कहा जाय, इन्सान की संकुचित सोच और नासमझी ने महापुरुषों और उनके मूल्यों को अपने-अपने खेमे में सीमित कर उनके विश्वव्यापी कद को खत्म किया। नतीजतन, 'मैं-मैं-तू-तू' और 'मेरा-तुम्हारा' की मानसिकता बुरी तरह से पनप गयी और द्वीप के समान एक दूसरे से कट कर रह गये या समांतर रेखाओं के समान अलग-अलग चलने लगे। आपसी फासले ने गलतफहमी, पूर्वाग्रह, स्वार्थ, प्रतियोगिता, आदि दुनियादारी से गिरफ्त होकर धर्म-परंपराओं को बात का बतंगड़ बनाकर रख दिया। इसका खामियाजा भोग कर लाखों-करोड़ों बेकसूरों ने समाज की बेवकूफी वी कीमत चुकायी भी है। धर्म के ठेकेदारों और धुरंधरों के लिये अभी भी वक्त शेष है। मानसिक बदलाव द्वारा मूल अलौकिक सत्ता की खोज की जाये, समवाय की भावना अपनायी जाये तथा अहिंसा और विश्व-शांति की पटरी पर आया जाय, धर्म-परंपराओं की पासंगिकता और भविष्य दोनों इसी में निहित हैं।

अहिंसा और विश्व-शांति के लिये समुदायों के बीच सद्भाव और मैत्री

विश्व-शांति कायम करने के लिये विभिन्न समुदायों के बीच सद्भाव, समरसता, एकता और मैत्री की भावना अत्यंत आवश्यक है। अपने लिये सोचना हर इन्सान का स्वभाव है। लेकिन, समाजिक जीवन में दूसरों के लिये भी सोचना जरूरी है। सोच की दोनों दिशाओं के बीच जब संतुलन बिगड़ जाता है, तनाव उत्पन्न होने, अपना आपा खोने और दूसरों पर हमला होने में देर नहीं लगती। अगर भिन्न-भिन्न समुदायों के बीच नज्दीकियाँ हासिल नहीं होती हैं, तो आपसी समझ नहीं बन पाती है। ऐसे हालात में, दूरियाँ अपने आप गलतफहमी और झगड़े की वजह बन जाती हैं। भारत माता गवाह है कि असामाजिक तत्वों ने भिन्न-भिन्न समुदायों को अलग-अलग समय पर बड़े पैमाने पर भी शिकार बना चुका है। बेतुक बातों को आधार बनाकर देश की औलाद की जान-माल को बेरहमी से तहस-नहस करना भारत के लिये वाकई शर्मनाक है। लोगों की समझदारी की कमी के साथ-साथ प्रशासन की नाकामो भी देश की शांति को भंग करने और सामाजिक जीवन में उथल-पुथल पैदा करने के लिये जिम्मेदार है। जरूरत इस बात की है कि हर नागरिक अपने-अपने औहदे से समुदाय, समाज और देश को शांतिपूर्ण और सुदृढ़ बनाने के लिये कार्य करे। भारत के बेशुमार छोटे-बड़े समुदायों में आपसी बातचीत और सरोकार बढ़ाये बिना अहिंसा और विश्व-शांति का मार्ग प्रशस्त नहीं हो सकता।

अहिंसा और विश्व-शांति के लिये राष्ट्रीय एकता और समरसता

विश्व-शांति के लिये भारत की राष्ट्रीय अखण्डता और एकता अहम् है। भारत का संविधान राष्ट्रीय स्तर पर सामाजिक समरसता के लिये मजबूत बुनियाद है। 'पंथ-निरपेक्षता' संविधान की सबसे खास नजरिया है। सभी धर्म-परंपराएँ, विचारधाराएँ और संस्कृतियाँ

भारत की अपनी हैं, उन सब से अच्छी बातों को ग्रहण करना हर नागरिक का फर्ज है, कानून के सामने सभी समुदाय बराबर हैं, यह इस नजरिये का केंद्रीय भाव है। विविधता में एकता को बढ़ावा देनेवाले इस नजरिये में भारत की असली पहचान निहित है। इस लिये, यह बेहद जरूरी है कि सभी नागरिक अलग-अलग समुदायों के साथ मिल-जुल कर रहें। लिंग, खानदान, जाति, प्रजाति, भाषा, विचारधारा, संस्कृति, रीति-रिवाज, खान-पान, वेशभूषा, पेशा, प्रदेश, आदि को लेकर जो हजारों की तादाद में जो समुदाय भारत में मौजूद हैं, वे आपस में सद्भाव व संबंध रखें, मिल-जुलकर चलें, एक दूसरे से सीखें और खुद को और देश को समृद्ध करें, ऐसे सुलझे हुए भाव में पंथ-निरपेक्षता की खूबसूरती निखरती है। इसके लिये परम आवश्यक है कि सभी नागरिक भारत के संविधान को अपना 'पवित्र ग्रंथ' मानें और उसके महान मूल्यों से प्रेरणा लेकर एक 'साझी तहजीब' को जीकर दिखायें। ऐसे पुनीत भाव से उत्पन्न राष्ट्रीय समरसता ही देश के स्तर पर विश्व-शांति को बनाये रखने की सही राह है।

अहिंसा और विश्व-शांति के लिये देशों के बीच सहकारी भावना

विश्व-शांति के लिये अलग-अलग देशों के बीच सहकारी भावना भी जरूरी है। देश एक भौगोलिक अवधारणा है। किसी भी भूभाग में रहनेवाले लोगों में सांस्कृतिक, वैचारिक, राजनीतिक, आर्थिक, आदि सामाजिक विशेषताओं को लेकर एकता और आजादी की भावना का होना स्वाभाविक है। हर देश की स्वायत्तता और अखण्डता मानवाधिकार के मापदण्डों के मुताबिक जायज भी है। इसके बावजूद, 'कौन बड़ा और कौन छोटा' इस फिजूल पसोपेश में नहीं फँसते हुए आपस में सम्मान, समता और सहयोग की भावना बनाये रखना, हकीकत में, सभी राष्ट्रों के हित में है। दूसरों के संसाधनों का नाजायज फायदा उठाने, उन्हें दबाकर रखने और उनपर राज करने की हौड़ हिंसात्मक रवैया है और विश्व-शांति के लिये खातक है। राष्ट्रों को चाहिये कि विश्व-समाज के लिये दूसरों के योगदान का अंगीकार करना सीखें। वर्तमान समय के वैश्वीकरण के दौर में इस धरती पर शांतिपूर्ण सहास्तित्व और संतुलित प्रगति की दिशा में चलने के लिये यही एक तरीका है। 'चलते रहना' प्रगति है, लेकिन 'साथ-साथ चलना' संतुलित प्रगति है। ऐसी 'साझी संस्कृति' की जीवन-शैली में अहिंसा की सही भावना जीवंत होती है और विश्व-शांति अनायास ही विश्व-समाज की कुदरती तहजीब के रूप में उभरेगी। ऐसे में इन्सानियत की गरिमा बनी रहेगी और यह धरती अधिक जीनेलायक साबित होगी। इस आदर्श की ओर मानव समाज की साम्मलित सफर निरंतर चलता रहे, यही मंगलकामनाएँ हैं, प्रयास भी।

डॉ. एम. डी. थॉमस

संस्थापक निदेशक, इंस्टिट्यूट ऑफ़ हार्मनि एण्ड पीस स्टडीज़, नयी दिल्ली

प्रथम मंजिल, ए 128, सेक्टर 19, द्वारका, नयी दिल्ली 110075

दूरभाष: 09810535378 (p), 08847925378 (p), 011-45575378 (o)

ईमेल : mdthomas53@gmail.com (p), ihps2014@gmail.com (o)

वेबसाइट: www.mdthomas.in (p), www.ihpsindia.org (o)

Twitter: <https://twitter.com/mdthomas53>

Facebook: <https://www.facebook.com/mdthomas53>

Academia.edu: <https://independent.academia.edu/MDTHOMAS>